International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 6; November 2016; Page No. 20-21

भूदान आंदोलन की सफलता का मूल्यांकन : एक अध्ययन

Jyoti Ojha Shukla

M.A, M.Phil. Net, Ph.D. Scholar, Dept. of history, Dr. B. R. Ambedkar University, Agra, Uttar Pradesh, India

प्रस्तावना

भू–दान भूमि सुधार करने, कृषि में संस्थागत परिवर्तन लाने, जैसे भूमि का पुनर्वितरण सिर्फ सरकारी कानूनों के जरिये नहीं बल्कि एक आंदोलन के माध्यम से करने की एक कोशिश थी। आचार्य विनोबा भावे ने स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् पचास के दशक में इस आंदोलन के लिये गांधीवादी तकनीकों एवं रचनात्मक कार्यों व ट्रस्टीशिप जैसे विचारों को प्रयोग में लाया। दुर्भाग्य ही कहा जाएगा कि इसके क्रांतिकारी महत्व को आमतौर पर अनदेखा कर दिया गया है।[1]

विनोबा भावे ने एक सर्वोदय समाज की स्थापना की, जो रचनात्मक कार्यकर्ताओं का अखिल भारतीय संघ था। इसका उद्देश्य था देश में अहिंसात्मक तरीके से सामाजिक परिवर्तन लाना। वे और उनके अनुयायी पदयात्राँ, करते थे। गाँव–गाँव पैदल जाकर बड़े भू–स्वामियों से अपनी जमीन का कम से कम छठा हिस्सा 'भूदान' के रूप में भूमिहीनों व गरीब किसानों के बीच बांटने के लिये देने का अनुरोध करते। उद्देश्य था, इस प्रकार 5 करोड़ एकड़ जमीन हासिल करना जो भारत में 30 करोड़ एकड़ जोतने लायक जमीन का छठा हिस्सा बनता था। विचार यह था कि औसतन पॉच सदस्यों का परिवार अपनी जमीन का छठा भाग छोड़ दे और भूमिहीन गरीब को अपने परिवार का सदस्य बना ले।[2]

बड़े राज्यों में कानून बनाकर ऐसी जमीनों के संग्रह और वितर.ा पर प्रशासन का नियंत्रण कायम किया गया तथा राजकीय बजट से इस आंदोलन को आर्थिक इमदादकी गयी।

अखिल भारतीय किसान सभा और भारतीय कम्प्यूनिस्ट पार्टी ने प्रारंभ से ही इस आंदोलन के प्रति जो रवैया अपनाया, वह उसके विरू) तो नहीं था पर साथ ही अंध समर्थन का भी नहीं था। किसानो को यह समझाने के साथ–साथ कि भूदान आंदोलन भूमि प्रश्न को जड़ से हल नहीं कर सकता, किसान सभा के स्थानीय कार्यकर्ताओं ने यह मांग करते हुँ, इस भूमि वितरण का समर्थन किया कि इस तरह से प्राप्त जमीन व्यवहार में भूमिहीन व अल्पभूमि किसानों और खेतिहर मजदूरों के बीच वितरित की जानी चाहिए।

सरकार से यह आंदोलन स्वतंत्र था, लेकिन कांग्रेस का समर्थन आंदोलन को प्राप्त था। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने कांग्रेसजनों से इसमें सक्रियता से भाग लेने का अनुरोध किया। भूतपूर्व प्रमुख कांग्रेस नेता और उस वक्त के प्रजा सोशलिस्ट पार्टी (पी. एस. पी.) महत्वपूर्ण नेता जयप्रकाश नारायण सक्रिय राजनीति छोड़कर 1953 में भू–दान आंदोलन में सम्मिलित हो गये।

भूदान आंदोलन तेलंगाना के विद्रोही किसानों द्वारा जमींदारों की संपत्ति के बलात् अधिग्रह.ा और वितर.ा का मुकाबला करने के लिये शुरू किया गया था। 18 अप्रैल, 1951 को आंध्रप्रदेश के तेलंगना क्षेत्र में पोचमपल्ली ग्राम में विनोबा भावे को जमीन का पहला दान मिला। इस जगह कम्यूनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में सशस्त्र किसान विद्रोह का असर अभी भी महसूस किया जा रहा था। तीन महीनों से भी कम समय में विनोबा ने इस क्षेत्र के करीब 200 गांवों का दौरा किया और दान के रूप में 12,200 एकड़ भूमि प्राप्त की। इसके पश्चात् आंदोलन उत्तर भारत में खासतौर पर बिहार और उत्तर प्रदेश में फैल गया। आरंभिक वर्षों में आंदोलन को काफी सफलता मिली। मार्च 1956 तक दान के रूप में 40 लाख ,कड़ से अधिक जमीन मिली।[3] जब जमींदारी उन्मूलन कानून बनाये और कार्यान्वित किये जा रहे थे तब आंदोलन अधिक सफल रहा। किन्तु जब जमींदारी प्रथा वाले इलाकों में भूमि सुधार के कार्यान्वय के परि.ामस्वरूप किसानों के जुझारूपन में एक अस्थायी ह्रास आया, तो यह नया आंदोलन भी धीरे–धीरे शांत पड़ गया और दान के रूप में काफी कम जमीन मिलने लगी।[4]

इसके अतिरिक्त दान की गई भूमि का एक खासा भाग खेती लायक नहीं था, या मुकद्मों में फंसा हुआ था। शायद इसलिए भी करीब 45 लाख एकड़ भूदान भूमि में से केवल 6 लाख 54 हजार एकड़ ही 1957 के अंत तक 2 लाख परिवारो के बीच असल में बांटी जा सकी। 1961 के आरंभ तक 8 लाख 72 हजार एकड़ जमीन बांटी गई।[5]

1955 का अंत आते–आते आंदोलन ने ,क नया रूप धार.ा किया वह था 'ग्रामदान' का, इसका प्रेर.ा स्त्रोत भी गांधीवादी विचार था, अर्थात् 'सारी भूमि गोपाल की, गोपाल अर्थात् भगवान की। ग्रामदान वाले गॉवों की भूमि को सामूहिक स्वामित्व की या सबों के लिये बराबर वाली भूमि माना गया, वह किसी एक व्यक्ति की नहीं मानी गई। आंदोलन की शुरूआत उड़ीसा में हुई और वहॉ वह काफी सफल रहा। 1960 का अंत आते–आते देश में ग्रामदान गांवों की कुल संख्या 4500 से अधिक हो चुकी थी।

इनमें से 1946 गॉव उड़ीसा में थे, 603 महाराष्ट्र में, 543 केरल में 483 आंध्रप्रदेश में और 250 मद्रास में। उन गांवों में यह आंदोलन अधिक सफल रहा जहॉ वर्ग–विभेद अधिक उभरे नहीं थे, और जहॉ जमीन या दूसरी संपत्ति का अंतर लगभग नहीं के बराबर था, जैसे कुछ आदिवासी समुदायो में कहा गया है कि विनोबा जी ने ऐसे ही गांवों का चुनाव किया।6

भू–दान आंदोलन से सारा भारत जाग उठा था। सर्वत्र सद्भाव व त्याग की एक लहर सी फैल गई। देश ही नहीं विदेशों में भी इस आंदोलन ने 'भूदानी बाबा' को प्रसिद्धि दिलाई। विनोबा ने भूदान यज्ञ को आंदोलन नहीं 'आरोहण' कहा। पश्चिमी चिंतक लुई फिशर ने लिखा–''ग्रामदान यह पूर्व से आया सर्वोत्तम विचार है।'' अमेरिका के प्रसि) नीग्रो नेता मार्टिन लूथर किंग अपनी पत्नी कोरेटा के साथ विनोबाजी से मिलने आये थे।[7]

एक बार स्त्रोत फूटा तो भूदान गंगा की अनेकानेक शाखॉ,–प्रशाखॉ, बहने लगीं–ग्रामदान, सम्पत्ति दान, श्रमदान, समयदान, तालुकादान, प्रख.डदान और राज्यदान के अंकुर तो फूटे ही निधि युक्ति, तंत्रयुक्ति जैसे आयाम भी प्राप्त हुए। यहॉ तक कि जीवनदानियों की सरिता फूट निकली। इसके अतिरिक्त सर्वोदय पात्रए शांति सेना, ग्राम स्वराज्य, लोकनीति, जयजगत की विचारधारा प्रकट हुई।[8]

बड़ी आशॉ, जगाने के बाजवूद साठ के दशक तक भूदान/ग्रामदान आंदोलन का जोर समाप्त हो गया। इसकी रचनात्मक क्षमताओं का आम तौर पर उपयोग नहीं किया जा सका। लेकिन कार्यक्रम किसी तरह आगे खिंचता चला गया। मूल रूप से यह भूला दिया गया, हालांकि कभी–कभार अजीब तरीकों से इसे याद किया जाता रहा,

जैसे–जून, 1999 के अपने निर्णय में बिहार सरकार ने घोषणा की कि वह राज्य भूदान समिति को भंग कर रही है क्योंकि वह पिछले 38 वर्षों में भू–दान में पायी आधी जमीन भी नहीं बांट पाई है।[9]

पं. जवाहरलाल नेहरू ने आंदोलन के सम्बन्ध में कहा था– ''आचार्य विनोबा भावे सारा प्रारंभ किया गया भू–दान आंदोलन एक अद्वितीय काम है। इस आंदोलन को बड़ी सफलता मिली है। यह सफलता जो भूमि व गॉव दान में मिले हैं उनसे भी नापी जा सकती है। लेकिन उससे भी महत्वपूर्ण परिणाम जो इस आंदोलन का निकला है, वह तो उसके द्वारा निर्मित वातावरण है, जो भूमि व्यवस्था के सुधार के लिये कानून बनाने में सहायक होता है, क्योंकि उस विषय में वह लोगों के मानस को ही बदलता है। मेरी राय में कानून भूमि व्यवस्था के सुधार के लिये आवश्यक है, लेकिन जनता के मानस को बदलना मूलतः उससे भी अधिक महत्वपूर्ण है। [10]

किन्तु भू–दान आंदोलन और उसकी संभावनाओं का उचित मूल्यांकन आज तक नहीं किया गया है। इसे बड़ी आसानी से 'यूरोपियन' या 'कल्पनावादी' कहकर नकार दिया गया है, इतना ही नहीं इसे वर्ग–सहयोगी, वर्ग–संघर्ष को रोकने वाला और प्रतिक्रियावादी भी बताया गया है। भारत में कृषि सुधारों के एक इतिहासकार के अनुसार इसका उद्देश्य ''किसानों के क्रांतिकारी सं?ार्ष पर ब्रेक लगाना था।'' कुछ लोग ऐसे विचार प्रकट करते हैं तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। पहले भी,इससे भी कहीं अधिक सफल गांधीजी के आंदोलनों का चरित्र–चित्रण कुछ इसी गलत ढंग से किया जाता रहा है।

भूदान आंदोलन के कुछ बहुत ही महत्वपूर्ण पहलू भी हैं। पहला यह कि आजादी के बाद यह उन प्रथम कोशिशों में से एक है जिन्होंने ऊपर से सरकारी कोशिशों के जरिये नहीं, बल्कि आंदोलन के जरिये भूमि सुधार की कोशिशें की। दूसरा इस आंदोलन मे बड़ी क्षमताएँ थीं क्योंकि यह ट्रस्टीशिप या सारी जमीन ईश्वर की होने की समझ पर आधारित था। यदि भू–स्वामी ट्रस्टियों या संपत्ति के बराबर के हकदार नहीं बनना चाहते तो उनके खिलाफ गंधीवादी तरीके से सत्याग्रह चलाया जा सकता था। 1961 में तमिलनाडु के सर्वोदय नेताओं ने यही सुझाव रखा था ''उन भूस्वामियों के खिलाफ सत्याग्रह शुरू कीजिये जो ग्रामदान में सहयोग करने से इंकार करते हों, और अपनी भूमि दान करने के वादे से मुकर जाते हों।[11]

कुछ समाजवादी ऐसे भी थे जो गांधीवादी विचारों व व्यवहार से प्रभावित थे। उनमें से कई पचास के दशक के आरंभ में प्रजा सोशलिस्ट पार्टी में थे। वे अन्याय के खिलाफ सत्याग्रह के माध्यम से जन असहयोग आंदोलन करके ट्रस्टीशिप और रचनात्मक कार्यों की क्रांतिकारी क्षमता मुखर करना चाहते थे। लेकिन सर्वोदय समाज यह काम करने में असफल रहा। वह ऐसा व्यापक जन–आंदोलन विकसित नहीं कर पाया जो देश के बड़े भागों में सामजिक परिवर्तन की असीम शक्ति पैदा कर दे।

फिर भी आंदोलन ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। उसने एक ऐसी नैतिक परिस्थिति, ऐसा वातावरण पैदा किया जो भू–स्वामियों पर दबाव डालते हुए भूमिहीनों के पक्ष में वातावरण निर्मित करे। प्रसिद्ध कम्यूनिस्ट नेता ई. एम. एस. नंबूद्रीपाद ने भी इसे स्वीकार किया है। उनके एक लेख 'सर्वोदय और कम्यूनिज्म' का हवाला देते हुए कोतोव्स्की लिखते है –

''भूदान और ग्रामदान आंदोलन ने.....एक हद तक किसानों की राजनीतिक गतिविधियों को प्रेरित किया है। साथ ही उन्होंने भूमि के पुर्नवितरण, भूमि में व्यक्तिगत संपत्ति की समाप्ति और कृषि उत्पादक सहकारों के विकास के प{ि में राजनैतिक प्रचार एवं आंदोलन के अनुकूल वातावरण तैयार किया है।''[12]

भू–दान आंदोलन के बड़े आलोचकों में से एक की ओर से किया गया यह विवेचन, विडंबना स्वरूप शायद भूदान आंदोलन की सबसे अच्छी प्रशंसा है। सामाजिक सेवा के लिए 1958 ई– में विनोबा जी को 'मैगसेसे' पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

संदर्भ

1. विपिनचन्द्र, मृदुला मुखर्जी, आदित्य मुखर्जी, आजादी के बाद का भारत, पृष्ठ 516, 17।
2. को.अ.अंतोनोवा, गि.म. बोंगर्द–लेविन, भारत का इतिहास पृष्ठ–697।
3. विपिनचन्द्र, मृदुला मुखर्जी, आदित्य मुखर्जी वही पृष्ठ– 517।
4. को.अ.अंतोनोवा, गि.म. बोंगर्द–लेविन गि.गि. कोतोत्स्की वही पृष्ठ 696।
5. विपिनचंद्र, मृदुला मुखर्जी, आदित्य मुखर्जी एवं इन्टरनेट द्वारा वही पृष्ठ 517।
6. विपिनचंद्र, मृदुला मुखर्जी, आदित्य मुखर्जी वही पृष्ठ 517।
7. कौलेश्वर राय इतिहास दर्शन पृष्ठ–153।
8. कौलेश्वर राय वहीं पृष्ठ–154।
9. इण्डियन एक्सप्रेस 16 जून, 1999।
10. वीरेन्द्र प्रभाकर– प्रज्ञापुरूष विनोबा, पृष्ठ–11।
11. 12. विपिनचंद्र, मृदुला मुखर्जी, आदित्य मुखर्जी वही पृष्ठ– 518 से 519।